गणगौर (गौरी तृतीया)

(चैत्र शुक्ल तृतीया)

होली के दूसरे दिन (चैत्र शुक्ल तृतीया) से कुमारी और विवाहित लड़कियां अर्थात नवविवाहिताएं प्रतिदिन गणगौर पूजती हैं। वे चैत्र शुक्ल द्वितीया (सिंजारे) के दिन किसी नदी, तालाब या सरोवर पर जाकर अपनी पूजी हुई गणगौर को पानी पिलाती हैं। फिर दूसरे दिन सांयकाल के समय उनका विसर्जन कर देती हैं।

गणगौर व्रत भारतीय हिंदू स्त्रियों का त्यौहार हैं। इस दिन सधवा स्त्रियां व्रत करती हैं। यह व्रत विवाहिता लड़कियों के लिए पति का अनुराग उत्पन्न करने वाला और कुमारियों को उत्तम पति देने वाला हैं। इससे सुहागिनों का सुहाग अखण्ड रहता हैं। यही कारण हैं कि हिंदू स्त्री समाज में यह दिन एक पर्व के रूप में मनाया जाता हैं।गौरी पूजन का यह त्यौहार भारत के सभी प्रांतों में थोड़े-बहुत नाम भेद से पूर्ण धूमधाम के साथ मनाया जाता हैं। राजस्थान का तो यह अत्यंत विशिष्ट त्यौहार हैं। इस दिन भगवान शिव ने पार्वतीजी को तथा पार्वतीजी ने समस्त स्त्री समाज को सौभाग्य का वरदान दिया था। इस दिन स्त्रियां सुंदर वस्त्र और आभूषण धारण करती हैं। इस दिन सुहागिनें दोपहर तक व्रत रखती हैं। व्रत धारण करने से पूर्व रेणुका गौरी की स्थापना करती हैं। इसके लिए घर के किसी कमरे में एक पवित्र स्थान पर चौबीस अंगुल चौड़ी और चौबीस अंगुल लंबी वर्गाकार वेदी बनाकर हल्दी, चंदन, कपूर, केसर आदि से उस पर चौक पूरा जाता हैं। फिर उस पर बालू से गौरी अर्थात पार्वती बनाकर (स्थापना करके) इस स्थापना पर सुहाग की वस्तुएं- कांच की चूड़ियां, महावर, सिंदूर, रोली, मेहन्दी, टीका, बिंदी, कंघा, शीशा, काजल आदि चढ़ाया जाता हैं।

चंदन, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से गोरी का विधिपूर्वक पूजन करके सुहाग की इस सामग्री का अर्पण किया जाता हैं। फिर भोग लगाने के बाद गौरीजी की कथा कही जाती हैं। कथा के बाद गौरीजी पर चढ़ाए हुए सिंदूर से महिलाएं अपनी मांग भरती हैं। गौरीजी का पूजन दोपहर को होता हैं। इसके पश्चात केवल एक बार भोजन करके व्रत का पारण किया जाता हैं। गणगौर का प्रसाद पुरुषों के लिए निषिद्ध हैं।

गणगौर पर विशेष रूप से मैदा के गुने बनाए जाते हैं। लड़की की शादी के बाद लड़की पहली बार गणगौर अपने मायके में मनाती हैं और इन गुनों तथा सास के कपड़ों का बायना निकालकर ससुराल में भेजती हैं। यह विवाह के प्रथम वर्ष में ही होता हैं, बाद में प्रतिवर्ष गणगौर लड़की अपनी ससुराल में ही मनाती हैं।

ससुराल में भी वह गणगौर का उद्यापन करती हैं और अपनी सास को बायना, कपड़े तथा सुहाग का सारा सामान देती हैं। साथ ही सोलह सुहागिन स्त्रियों को भोजन कराकर प्रत्येक को संपूर्ण श्रृंगार की वस्तुएं और दक्षिणा दी जाती हैं। गणगौर पूजन के समय स्त्रियां गौरीजी की कथा भी कहती हैं।

कथा

एक बार भगवान शंकर, पार्वतीजी तथा नारदजी के साथ पृथ्वी पर भ्रमणार्थ निकले। चलते-चलते तीनों एक गांव में पहुंचे। उस दिन चैत्र शुक्ल तृतीया थी। जब गांव वालों ने सुना की भगवान शंकर, पार्वतीजी सहित पधारे हैं तो उनके आगमन का समाचार सुनकर गांव की कुलीन स्त्रियां स्वागत के लिए स्वादिष्ट और रूचिकर भोजन बनाने लगी। भोजन की तैयारी में उन्हें देर हो गई।

किंतु साधारण कुल की स्त्रियां जैसे बैठी थी वैसे ही थाली में हल्दी-चावल तथा जल लेकर दौड़ी हुई शिव-पार्वती के पूजन हेतु उनके पास पहुंच गई। पार्वतीजी ने उनके पूजा भाव को स्वीकार कर, उनकी भक्ति रूपी वस्तुओं को स्वीकार कर उनके ऊपर सारा सुहाग रस छिड़क दिया। वे अटल सौभाग्य प्राप्ति का वरदान पाकर लौटी। तत्पश्चात उच्च कुल (कुलीन) की स्त्रियां सोलह श्रृंगार और आभूषणों से सजी हुई, अनेक प्रकार के पकवान और पूजा की सामग्री लेकर गौरी और शंकरजी की पूजा करने पहुंची। सोने-चांदी से निर्मित उनकी थालियों में विभिन्न प्रकार के पदार्थ सजे हुए थे। उन्हें देखकर शिवजी ने शंका व्यक्त करते हुए पार्वतीजी से कहा- 'देवी! तुमने सारा सुहाग रस तो साधारण कुल की स्त्रियों में बांट दिया, अब इन्हें क्या देंगी?'

पार्वतीजी ने कहा- 'भगवन! आप इसकी चिंता मत कीजिए। उन स्त्रियों को तो मैंने केवल ऊपरी पदार्थ से बना रस दिया हैं। इसलिए उनका सुहाग धोती से रहेगा। परन्तु इनको (कुलीन स्त्रियों) अपनी उंगली चीरकर अपने रक्त 'रस का सुहाग दूंगी। यह सुहाग रस जिसकी मांग में पड़ेगा। वह मेरे समान ही तन-मन से सौभाग्यवती हो जाएगी।' जब कुलीन स्त्रियां पूजन कर चुकी तो पार्वतीजी ने अपनी उंगली चीरकर उन पर छिड़की। जिस पर जैसे छींटे पड़े, उसने वैसा ही सुहाग पाया। पार्वतीजी ने कहा तुम लोग वस्त्राभूषणों का परित्याग कर माया-मोह से रहित तन-मन-धन से पति सेवा करना। अखण्ड सौभाग्य की प्राप्ति होगी। पार्वतीजी के यह आशीर्वचन सुनकर उन्हें प्रणाम करके कुलीन स्त्रियां अपने-अपने घर लौट गई। इसके बाद भगवान शिव की आज्ञा से पार्वतीजी ने नदी तट पर स्नान किया और बालू के महादेव बनाकर उनका पूजन करने लगी। पूजन के बाद बालू के ही पकवान बनाकर शिवजी को भोग लगाया। इसके बाद प्रदक्षिणा करके, नदी तट की मिट्टी से माथे पर टीका लगाकर, बालू के दो कणों का प्रसाद पाया और शिवजी के साथ वापस लौट आईं। इस सब पूजन आदि में पार्वतीजी को नदी किनारे बहुत देर हो गई थी। अतः महादेवजी ने उनसे देरी से आने का कारण पूछा। इस पर पार्वतीजी ने कहा- 'वहां मेरे भाई-भावज आदि मायके वाले मिल गए थे, उन्हीं से बातें करने में देर हो गई।' परन्तु भगवान तो आखिर भगवान थे। वे शायद कुछ और ही लीला रचना चाहते थे। अतः उन्होंने पूछा- 'तुमने पूजन करके किस चीज का भोग लगाया और क्या प्रसाद पाया?'

पार्वतीजी ने उत्तर दिया- 'मेरी भावज ने मुझे दूध-भात खिलाया। उसे ही खाकर मैं सीधे यहां चली आ रही हूं।' यह सुनकर शिवजी भी दूध-भात खाने के लालच में नदी-तट की ओर चल पड़े। पार्वतीजी दुविधा में पड़ गईं। उन्होंने सोचा की अब सारी पोल खुल जाएगी। अतः उन्होंने मौन-भाव से शिवजी का ध्यान करके प्रार्थना की, 'हे प्रभु! यदि मैं आपकी अनन्य दासी हूं तो आप ही इस समय मेरी लाज रखिए।' इस प्रकार प्रार्थना करते हुए पार्वतीजी भी शंकरजी के पीछे-पीछे चलने लगी। अभी वे कूछ दूर चले थे कि उन्हें नदी के तट पर एक सुंदर माया महल दिखाई दिया। जब वे उस महल के भीतर पहुंचे तो वहां देखते हैं कि शिवजी के साले और सलहज आदि सपरिवार मौजूद हैं। उन्होंने शंकर-पार्वती का बड़े प्रेम से स्वागत किया। वे दो दिन तक वहां रहे और उनकी खूब मेहमानदारी होती रही। तीसरे दिन जब पार्वतीजी ने शंकरजी से चलने के लिए कहा तो वे तैयार न हुए। वे अभी और रूकना चाहते थे। पार्वतीजी रूठकर अकेले ही चल दी। तब मजबूर होकर शंकरजी को पार्वती के साथ चलना पड़ा।

नारदजी भी साथ चल दिए। तीनों चलते-चलते बहुत दूर निकल गए। सांयकाल होने के कारण भगवान भास्कर अपने धाम को पधार रहे थे। तब शिवजी अचानक पार्वती से बोले- 'मैं तुम्हारे मायके में अपनी माला भूल आया हूं।' पार्वतीजी बोली- 'ठीक हैं, मैं ले आती हूं।' किंतु शिवजी ने उन्हें जाने की आज्ञा नहीं दी। इस कार्य के लिए उन्होंने ब्रह्मापुत्र नारदजी को वहां भेज दिया। नारदजी ने वहां जाकर देखा तो उन्हें महल का नामोनिशान तक न दिखा।

वहां तो दूर-दूर तक घोर जंगल ही जंगल था। इस अंधकारपूर्ण डरावने वातावरण को देख नारदजी बहुत ही आश्चर्यचकित हुए। नारदजी वहां भटकने लगे और सोचने लगे कि कहीं वह किसी गलत स्थान पर तो नहीं आ गए? सहसा बिजली चमकी और नारदजी को माला एक पेड़ पर टंगी हुई दिखाई दी। नारदजी ने माला उतार ली और उसे लेकर भयातुर अवस्था में शीघ्र ही शिवजी के पास आए और शिवजी को अपनी विपत्ति का विवरण कह सुनाया। इस प्रसंग को सुनकर शिवजी ने हंसते हुए कहा- 'हे मुनि! आपने जो कुछ दृश्य देखा, वह पार्वती की अनोखी माया हैं। वे अपने पार्थिव पूजन की बात को आपसे गुप्त रखना चाहती थी, इसलिए उन्होंने झूठ बोला था। फिर उसको सत्य सिद्ध करने के लिए उन्होंने पतिव्रत धर्म की शक्ति से माया महल की रचना की। अतः सच्चाई को उभारने के लिए मैंने भी माला लाने के लिए तुम्हें दुबारा उस स्थान पर भेजा था।'

इस पर पार्वतीजी बोली- 'मैं किस योग्य हूं।' तब नारदजी ने सिर झुकाकर कहा- 'माता। आप पतिव्रताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं। आप सौभाग्यवती आदिशक्ति हैं। यह सब आपके पतिव्रत धर्म का ही प्रभाव हैं। संसार की स्त्रियां आपके नाम का स्मरण करने मात्र से ही अटल सौभाग्य प्राप्त कर सकती हैं और समस्त सिद्धियों को बना तथा मिटा सकती हैं। तब आपके लिए यह कर्म कौन-सी बड़ी बात हैं?हे माता! गोपनीय पूजन अधिक शक्तिशाली तथा सार्थक होता हैं। जहां तक इनके पतिव्रत प्रभाव से उत्पन्न घटना को छिपाने का सवाल हैं। वह भी उचित ही जान पड़ती हैं क्योंकि पूजा छिपाकर ही करनी चाहिए। आपकी भावना तथा चमत्कारपूर्ण शक्ति को देखकर मुझे बहूत प्रसन्नता हुई हैं। मेरा यह आशीर्वचन हैं- 'जो स्त्रियां इस तरह गुप्त रूप से पति का पूजन करके मंगन कामना करेंगी उन्हे महादेवजी की कृपा से दीर्घायु पति का संसर्ग मिलेगा तथा उसकी समस्त मनो-कामनाओं की पूर्ति होगी। फिर आज के दिन आपकी भक्तिभाव से पूजा-आराधना करने वाली स्त्रियों को अटल सौभाग्य प्राप्त होगा ही।' यह कहकर नारदजी तो प्रणाम करके देवलोक चले गए और शिवजी-पार्वतीजी कैलाश की ओर चल पड़े। चूंकि पार्वतीजी ने इस व्रत को छिपाकर किया था, उसी परंपरा के अनुसार आज भी स्त्रियां इस व्रत को पुरुषों से छिपाकर करती हैं। यही कारण हैं कि अखण्ड सौभाग्य के लिए प्राचीन काल से ही स्त्रियां इस व्रत को करती आ रही हैं।

नवरात्रः

शक्ति की उपासना का उत्तम काल

यादेवी सर्वभूतेषू शक्ति रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

जो देवी संसार के समस्त प्राणियों में शक्ति के रूप में स्थित हैं, उस शक्ति स्वरूपा पराम्बा माता दुर्गा को बारम्बार नमस्कार है। संसार में जितनी वस्तुएं दिखाई देती हैं। सभी के अधिष्ठांत्र देवता बतलाए गए हैं, परंतु अति महत्वपूर्ण है, शक्ति एवं शक्ति का उपयोग। शक्ति के अभाव में कुछ भी संभव नहीं है। यदि यह कहा जाए कि शक्ति का प्रयोग न जानने वाला शक्ति होते हुए भी शक्ति विहीन है। परिणामस्वरूप श्री दुर्गा सप्तशती में मधु कैटभ, चामुण्ड, इत्यादि ऐसे भयंकर असुरों का वर्णन आता है, जिनके पास अथाह शक्ति थी। परंतु उस शक्ति का उपयोग अति निकृष्ट था। श्री दुर्गा सप्तशती के प्रथम अध्याय में दो ऐसे असुरों का वर्णन मिलता है, जिन्होंने भगवान विष्णु से कई वर्ष तक युद्ध किया। भगवान विष्णु ने चिंतन किया कि इन्हें शक्ति प्राप्त है। युद्ध से जीता नहीं जा सकता। महामाया की प्रेरणा से बुद्धिरूप में स्थित देवी का ध्यान किया और उन दैत्यों से कहा कि हम तुमसे अति प्रसन्न हैं, वर मांगो। दैत्यों ने हँस कर कहा की वर तुम नहीं हम देंगे, क्योंकि हमारे पास शक्ति है। मांगो क्या मांगते हो। भगवान विष्णु ने कहा कि यदि तुम दोनों हमसे प्रसन्न हो तो मुझे यह वर दो कि तुम दोनों मेरे हाथों मारे जाओ। और उन्हें वर देना पड़ा तथा वरदान के बाद उनका बध हो गया। शक्ति का उपयोग शक्तिमान व्यक्ति उचित तरीके से नहीं करता है, तो उसका विनाश शीघ्र हो जाता है। परंतु शक्ति अर्जित कैसे की जाए, यह विचारणीय प्रश्न है। वर्ष में चार नवरात्रों का वर्णन मिलता है। दो गुप्त एवं दो प्रत्यक्ष। प्रत्यक्ष दो नवरात्रों में एक को शारदीय नवरात्र व दूसरे को वासन्तिक नवरात्र कहा जाता है। शारदीय अर्थात शरद ऋतु में पड़ने वाला नवरात्र। नवरात्र में नव शब्द

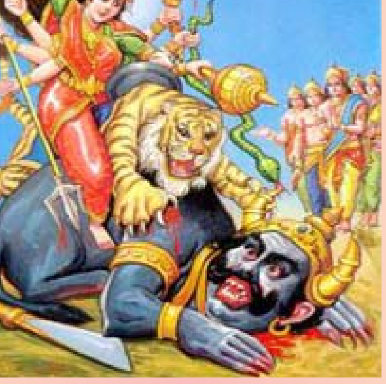

संख्यावाची भी है तथा नवीनता का द्योतक भी। नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः के अनुसार माता दुर्गा के नव स्वरूपों का वर्णन मिलता है और ये स्वरूप नवीन है, नए-नए हैं। अर्थात माता दुर्गा के नवों स्वरूपों में उल्लास के साथ रत हो जाना, लग जाना, ध्यानावस्थित हो जाना, नवरात्र की एक परिभाषा हो सकती है। अब किसी नवीनता को प्राप्त करने के लिए प्राचीनता को बदलना होगा, इस पर विचार करना होगा। इस परिप्रेक्ष्य में पौरोहित्य शास्त्र पहला सूत्र देता है, संकल्प का। संकल्प का अर्थ है सम्यकं तरीके से कल्पना की जाए।

आज कल्पना ही सम्यकं नहीं है। सम्यकं शब्द का अभिप्राय उचित है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को शक्ति के अर्जन में प्रथम पीढ़ी के रूप में संकल्प लेना चाहिए। नवरात्र की पूर्व संध्या में मन में साधक यह संकल्प लेता है कि मुझे शक्ति की उपासना करनी है। उसके बाद बनाई गई योजनाओं को कार्यान्वित करना होगा। मानव मस्तिष्क की यह व्यवस्था है कि योजनाओं को किस प्रकार मूर्तरूप प्रदान किया जाए।

शक्ति पूजक को चाहिए कि वह रात्रि में शयन ध्यानपूर्वक करें। प्रातः काल उठकर भगवती का स्मरण कर ही नित्य क्रिया प्रारम्भ करनी चाहिए। नीतिगत कार्यो से जुड़कर अनीतिगत कार्यो को उपेक्षित करनी चाहिए। सत्य का आचरण करना चाहिए। आहार संबंधी पवित्रता का ध्यान रखना चाहिए। दूसरे के अपकार का चिंतन न करें। नवरात्र में सम्यक् प्रकार से सत्याचरण करते हुए व्यक्ति शक्ति का अर्जन कर सकता है।

मेवाड़ की धरोहर-48

मेवाड़ का शौर्यपूर्ण अनुवंश

मेवाड़ महिमा
– नारायण लाल शर्मा –

पन्ना धाय-

डूंगरपुर से निकल कर पन्ना उदयसिंह को लेकर भोमट के मार्ग को पार करती हुई कुम्भलगढ़ पहुंची। विधि की कैसी विडम्बना है, जो राजकुमार अपने महलों में सुख-वैभव से रहता था, लोग उसे 'खमा अन्नदाता' कहकर सम्मान किया करते थे, आज उसे अपने आश्रय के लिये दर-दर भटकना पड़ रहा था। पन्नाधाय द्वारा परिचय देने पर भी एक बार तो किलेदार आशा देवपुरा ने किले का द्वार नहीं खोला, पर मां के आग्रह पर द्वार खोल कर उनका अभिनन्दन किया और सुरक्षा का प्रबन्ध कर उन्हें वहां रखा। पन्ना को थोड़ी आशा बन्धी और उसे एक सहयोगी मिला। उसी के सहयोग से उसने उदयसिंह के ननिहाल समाचार भिजवाया कि उदयसिंह जीवित है। समाचार पाकर वे कुम्भलगढ़ आ गये। अपने भानजे को पाकर अति प्रसन्न हो गये। धीरे-धीरे सामन्त वर्ग भी वहां आकर जुटने लगा। (उदयपुर राज्य का इतिहास-ओझा-पृ. 403)

इस बीच मेवाड़ के सभी सामन्तों और संभ्रान्त लोगों का एक पारिवारिक कार्यक्रम आशा देवपुरा ने इस बहाने से रखा ताकि सभी लोगों को उदयसिंह के जीवित होने का विश्वास हो जाय क्योंकि बनवीर ने यह प्रचारित किया था कि "मैंने उदयसिंह की हत्या कर दी है।" सभी लोगों के वहां आ जाने पर पन्ना ने उदयसिंह के बचाने की सारी घटना बता दी। जब उनको इस बात पर विश्वास नहीं हुआ तो सच्चाई जानने के लिये पन्ना ने चित्तौड़ में स्थित पन्ना खींची नाम की अन्य सेविका, जो वध के समय उस कक्ष में उपस्थित थी, को एक पत्र हलकारा के साथ भेजा जिसका उत्तर पन्ना खींची ने यह लिख भेजा कि "पन्ना धाय, वारी और वारण जो कह रहे हैं वह पूर्णतः सत्य है।" इसका अनुमोदन बून्दी के शासक परिवार ने भी किया जो उदयसिंह के ननिहाल पक्ष के थे (रावल राणा री वात-पन्ना का कुल उदयलाल धाभाई, पृष्ठ 4-5)

इस तथ्य के जानने के पश्चात मारवाड़ से सम्बन्ध जोड़ने के लिये पाली के अक्षयराज सोनगरा की पुत्री का हाथ उदयसिंह के लिये मांगा गया। अक्षयराज सोनगरा के द्वारा वही प्रश्न किये जाने पर कि क्या उदयसिंह यही है? सभी सामन्तों ने उदयसिंह के थाल से भोजन लेकर यह सिद्ध कर दिया कि यह वास्तविक उदयसिंह है और यही मेवाड़ का अधिपति है। (उदयपुर राज्य का इतिहास – ओझा, पृ. 404) अक्षयराज ने अपनी पुत्री जैवन्ता बाई का विवाह उदयसिंह से करा दिया। उन दिनों राजनयिक सम्बन्ध बनाने के लिये भी विवाह किये जाते थे। इस विवाह से भी मेवाड़ के मारवाड़ के साथ मधुर सम्बन्ध बने। पन्ना अपने मालिक के वचन को अक्षरशः निभा रही थी, वह उस समय मां का धर्म निभा रही थी जिसका सम्मान उदयसिंह भी कर रहा था।

उदयसिंह का मुख्य लक्ष्य अपने सम्पूर्ण राज्य पर अधिकार प्राप्त करना था, इस हेतु उसने सभी मित्र सामन्तों को और मित्र राज्यों को परवाने भेजे। परवाने प्राप्त कर सभी कुम्भलगढ़ में एकत्रित होने लगे और चित्तौड़ पर आक्रमण की तैयारी करने लगे। इस प्रकार बड़ी सेना एकत्रित होने पर उदयसिंह कुम्भलगढ़ से चित्तौड़ की ओर चला। (वही पृ. 404)

बनवीर भी इस युद्ध के लिये सिद्ध था। उसने कुंवरसी तंवर के नेतृत्व में सेना के साथ उदयसिंह का मुकाबला करने भेजा। माहोली (मावली) गांव के पास दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई जिसमें कुंवरसी सेना सहित मारा गया। यहां से ताणा आदि किले जीतते हुए उदयसिंह ने सेना सहित चित्तौड़ को घेर लिया। चित्तौड़ किले में प्रवेश इतना आसान नहीं था। आशा देवपुरा और चित्तौड़ के किलेदार चील मेहता के सहयोग से रात्रि के समय सेना ने किले में प्रवेश किया। इस अप्रत्याशित आक्रमण से किले की सेना घबरा कर इधर उधर भागने लगी। कहते हैं कि बनवीर अपने परिवार सहित लाखोटा दरवाजे से भाग निकला। इस प्रकार वि.स. 1597 (सन 1540 ई.) में उदयसिंह अपने सम्पूर्ण पैतृक राज्य का स्वामी बना। (वही पृ. 404)

पन्ना, जिसने कष्ट भोग कर उदयसिंह को बचाया और जिसने कर्मवती के उस वचन को निभाया जिसे उसने उदयसिंह को बून्दी ले जाते हुए पन्ना को कहे थे, इस समाचार से कितनी प्रसन्न हुई होगी उसकी आज हम कल्पना नहीं कर सकते। जिस लक्ष्य के लिये पन्ना ने प्रयत्न किया, समझदारी से उदयसिंह को प्रारंभ में गुप्त रखा, वह लक्ष्य उस दिन पूरा हो गया था। उदयसिंह अपने राज्य का स्वामी बना। एक प्रश्न अवश्य उठता है कि पन्ना उसे उसके ननिहाल बून्दी ले जा सकती थी जैसा कि पूर्व में चित्तौड़ के आक्रमण के समय वि.स. 1589 में वह गई थी। परन्तु उसने ऐसा नहीं किया, वह उदयसिंह को उजागर करके बनवीर को सावधान करना नहीं चाहती थी। वह उसे उसी गलतफहमी में रहने देना चाहती थी ताकि उदयसिंह मेवाड़ के सभी सामन्तों, मित्र राज्यों से सहयोग लेने में सफल हो सके और वह उस कूटनीति में सफल हुई। इसी सफलता के कारण वह प्रसन्न थी।

पन्ना उस समय कुम्भलगढ़ में थी। चित्तौड़ पर विजय के समय ही महाराणा उदयसिंह की राणी जैवन्ताबाई ने पुत्ररत्न को जन्म दिया। ये दो-दो खुशियां एक साथ आयी। पन्ना ने प्रताप का भी धाय मां बनकर लालन पालन किया। पन्ना के आगे के जीवन के बारे में इतिहास मौन है। यह खोज का विषय है। पन्ना ने मेवाड़ के राजकुल के साथ साथ गुर्जर जाति का भी गौरव बढ़ाया। पन्ना के कारण गुर्जर जाति की 'धवा और धाय' की परम्परा ही नहीं चली, अपितु उदयपुर में गुर्जर जाति को वही मान दिया गया जो राजकुल को है। उनके दाह संस्कार भी उसी महासतिया में होते हैं जहां राजकुल के लोगों के होते हैं। मेवाड़ के इतिहास में पन्ना का चरित्र अतुलनीय है और सदा सर्वदा स्मरण करने योग्य है। (क्रमशः)